इकाई 3 देश की अवधारणा

इकाई प्रारूप

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 देश / स्थान की सामान्य अवधारणा

3.3 देश तथा भूमि का विवेचन

3.3.1 काकिणी विचार

3.3.2 ग्रामवास में नराकृति विचार

3.3.3 नामराशि से ग्रामवास का शुभाशुभत्व

3.3.4 नामाक्षर के अनुसार ग्रामवास विचार

3.3.5 ग्रामवास के सम्बन्ध में शिवाबलि का विचार

3.3.6 राशि के अनुसार ग्रामवास में निषिद्धस्थान

3.4 देश चयन का विचार

3.4.1 अक्षांश विचार

3.4.2 देशान्तर विचार

3.5 सारांश

3.6 शब्दावली

3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

3.8 बोध प्रश्न

3.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आपको :

- देश चयन की अवधारणा का ज्ञान हो सकेगा।
- निवास हेतु भूमि चयन की अवधारणा का ज्ञान हो सकेगा।
- भूमि चयन की विविध विधियों में काकिणी का विचार कैसे किया जाता है यह ज्ञान हो सकेगा।
- ग्रामवास में नराकृतिचक्र के माध्यम से भूमिचयन की विधि का ज्ञान हो सकेगा।
- नामराशि से ग्रामवास का शुभाशुभत्व का ज्ञान हो जाएगा।
- नामाक्षर के अनुसार ग्रामवास का बोध हो सकेगा।
- ग्रामवास के सन्दर्भ में शिवाबलि के अनुसार भूमिचयन के शुभाशुभत्व का बोध हो सकेगा।

- अक्षांश द्वारा देश चयन की अवधारणा का बोध कर सकेंगे।
- देशान्तर द्वारा देश चयन को समझ सकेंगे।

3.1 प्रस्तावना

वस्तुतः हम सब जानते हैं कि देश अथवा स्थान के बिना हम दिक् और काल का ज्ञान ही नहीं कर सकते हैं। अर्थात हम कह सकते हैं कि दिक् और काल का आधार देश ही है। देश के भेद से काल में भी भेद उत्पन्न हो जाता है। अतः भारतीय वास्तुशास्त्र की समृद्ध परम्परा में इन दिग्, देश और काल तीनों का समग्र चिन्तन किया जाता है जिस में देश का स्थान सर्वाधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि देश से ही निर्माण प्रक्रिया का शुभारम्भ होता है। अतः वास्तुशास्त्रानुसार सर्वप्रथम स्थान (देश) चयन के उपरान्त दिक् के शुभाशुभत्व का विचार किया जाता है। अतः शास्त्रानुसार देश और काल की शुद्धता के आधार पर ही वास्तु का विधान होना चाहिए। वास्तु के ग्रन्थों में दिक्-देश आदि विषयों पर विस्तार से वर्णन उपलब्ध है। सामान्यतया देश का सम्बन्ध क्षेत्र विशेष अथवा स्थान विशेष से है जिसमें वास्तुनिर्माण किया जाना है। काल का सम्बन्ध समय (टाइम) से है। क्षेत्र अथवा देश का निर्धारण अक्षांश व देशान्तर के आधार पर होता है। प्रकृति जनपद एवं जलवायु को दृष्टि में रखकर देश- भूमि चयन किया जाता है। राजधानी स्थान निवेश के सम्बन्ध में आचार्य शुक्र कहते हैं कि "अपनी राजधानी राजा ऐसी जगहा बनावे जहां नाना प्रकार के वृक्ष और लता हों और पशु और पक्षीयों के गण से युक्त देश हो और जिसमें काष्ठ और तृण का सुख हो और समुद्रपर्यन्त नाव के गमन का जहां अनुकूल हो और जहां पर्वत समीप हो रमणीक और सम भूमि हो जहां हो" [1]। शुक्राचार्य के इन वचनों के सदृश वास्तुशास्त्र के विभिन्न आचार्यों ने भी स्थान चयन के सम्बन्ध अपने अभिमत प्रस्तुत किए हैं। इसी प्रकार प्रस्तुत इकाई में हम देश अथवा भूमि चयन की अवधारणा को विस्तृत रूप में समझेंगे।

3.2 देश / स्थान की सामान्य अवधारणा

वास्तु के प्रसिद्ध आचार्य वराहमिहिर ने अपने बृहत्संहिता नामक ग्रन्थ में वास्तु का परिचय दिया है, जिस में देश का विशद् वर्णन किया है। वस्तुतः हम सभी जानते हैं कि यह भूमि हमारी माता है और हम सभी इसकी सन्तति है।[2] अतः हम कह सकते हैं कि यह भूमि ही हमारा आधार है। साथ ही यह भी सर्वविदित है कि आखिल ब्रह्माण्ड में पंचमहाभूतों की सत्ता सर्वत्र विद्यमान है इसलिए इन पंचमहाभूतों अर्थात् पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश के बिना इस सम्पूर्ण चराचर जगत की कल्पना करना भी असम्भव है। अतः हम कह सकते हैं कि पृथ्वी अर्थात् देश एक ऐसा तत्व है जहां पर जल-अग्नि-वायु- आकाश भी आनुपातिक रूप में तो विराजते ही हैं साथ ही इस धरा धाम (पृथिवी) को प्रकृति की तीन मुख्य शक्तियां गुरुत्व-चुम्बकीय - सौर शक्ति भी सतत प्रभावित करती हैं। अतः हम इस अखिल ब्रह्माण्ड में देश/भूमि के महत्व को किसी भी प्रकार से नकार नहीं सकते हैं। **देश के भेद से काल में तो भेद होता ही है** साथ में व्यक्ति -व्यक्ति में भी हम भेद को देखते और समझते आये हैं। हम व्यक्ति के रूप रंग वेशभूषा वाणी आदि के अनुसार यह समझ जाते हैं कि इस व्यक्ति का सम्बन्ध इस देश

[1]. **शुक्रनीति 1/12,13**

[2]. माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः, पृथिवी सूक्त श्लोक 12

से है। अतः मानव अपने किसी भी प्रकार के आश्रयस्थल अर्थात् निमार्ण सम्बन्धित कार्य गृह-मन्दिर- ग्राम नगर-पुर आदि के लिए सर्वप्रथम भूमि पर ही निर्भर है। अतः कहा भी गया है - **पूर्वं भूमि परीक्षेत पश्चाद वास्तुं समारभेत,** देश-काल एवं परिस्थिति अथवा वातावरण के अनुसार भूमि के आकार प्रकार गुण आदि में भी बदलाव आते रहते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि अथर्ववेद के उपवेद स्थापत्य वेद अथवा वास्तुशास्त्र में भूमि की विशद व्याख्या देखने को मिलती है। वहां हमे भूमि शोधन की अनेक विधियां प्राप्त होती है। भूखण्ड चयन के सिद्धान्त तथा आसपास का वातावरण आदि का अध्ययन देश अध्ययन के अन्तर्गत आता है। जैसे भूमि का गुण-प्रकार -प्रकृति-आसपास की भूमियां, पेड़-पौधे, नदी-तालाब, पर्वत- चट्टान आदि को मिलाकर इनका विचार ही भूमि का अध्ययन कहलाता है। इन्हीं समग्र विचारों के अध्ययन को हम स्थान या देशविचार के नाम से जानते है।

3.3 देश और भूमि का विवेचन

जैसा कि हम चर्चा कर चुके हैं यह विषय अथर्ववेद के उपवेद स्थापत्य वेद[3] अर्थात् वास्तुशास्त्र का विषय है। जिसमें एक निश्चित भूखण्ड को भूमि के रूप में मानकर उस पर निमार्ण कार्य किया जाता है। वह निर्माण क्षेत्र जिस वातावरण में अथवा जिस भौगौलिक परिस्थित में होता है उसी स्थिति को स्थान के नाम से जाना जाता है। उदाहरण स्वरूप यदि हम किसी क्षेत्र विशेष की चर्चा करते है अथवा उस क्षेत्र विशेष की स्थिति को जानना चाहें कि वह स्थान कहां है तो हम दो प्रकार से जान सकते हैं, यथा एक तो हम उस क्षेत्र के आस-पास की स्थिति परिस्थिति को जानकर तथा दूसरा वहां के अक्षांश और देशान्तर की स्थिति के अनुसार, इस तरह यहां हम यह भी कह सकते हैं कि स्थान अथवा देश एक ऐसी सत्ता है जिसे हम किसी सामान्य परिभाषा के शब्दों में बांध नहीं सकते, वस्तुतः व्यापक अवयवों के साथ देश का अर्थ भी व्यापक हो जाता है। जैसे हम भारत देश की बात करें तो अपने आप में बहुत विस्तार से युक्त असंख्य अवयवों को अपने आप में समेटे हुए हैं। इसलिए भारत एक व्यापक स्थान है। अब इस भारत देश के अन्दर किसी नियत स्थान की बात करें तो दिल्ली एक अन्य स्थान है। फिर दिल्ली में किसी जगह जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय है तो हम कहेंगे कि इस विश्वविद्यालय का भूखण्ड दिल्ली में स्थित है। अथवा भौगोलक दृष्टि से भी हम अक्षांश व देशान्तर के माध्यम से कह सकते है कि यह विश्वविद्यालय इतने अक्षांश व देशान्तर विशेष पर स्थित है। जैसा कि हमें विदित है वास्तुशास्त्र में किसी देश अथवा उस क्षेत्र के भूखण्ड के शुभाशुभ का परिज्ञान उस स्थान के आधार पर किया जाता है। उस स्थान अथवा क्षेत्र विशेष में स्थित पंचमहाभूतों तथा सौर ऊर्जा- चुम्बकीय शक्ति व गुरुत्वीय शक्तियों का परस्पर सामंजस्य व समन्वय के आधार पर ही हम उस देश अथवा क्षेत्र विशेष के शुभाशुभत्व को समझ सकते हैं। क्योंकि उस स्थान के शुभाशुभ का सर्वप्रथम प्रभाव भूमि पर ही पड़ता है। अतः वास्तुशास्त्र में देश को बहुत महत्वपूर्ण बताया है। इन सब बातों से अलग हटकर गर्गादि आचार्यो ने देश के सन्दर्भ में यह तक कह दिया है कि जिस देश अथवा भूमि पर जाते ही हमारे नेत्र व मन प्रफुल्लित हो जाए उस भूमि पर ही गृहादि का निर्माण करना चाहिए। यथा बृहद्वास्तुमाला में कहा भी है

मनश्चक्षुषोर्यत्र सन्तोषो जायते भुवि ।

---

[3]. वेदशाखापर्यायलोचनम् कात्यायनकृतश्च संस्कृतव्याख्यया समलंकृतः चरणव्यूहः पृष्ठम् -71,चौखम्भा विद्याभवन,वाराणसी,संस्करण – 2001.

तस्यां कार्यं गृहं सर्वैरिति गर्गादिसम्मतम्।।[4]

इसी प्रकार वास्तुशास्त्र में भूमि के शुभाशुभत्व के सन्दर्भ में धन ऋण (कांकिणी) विचार -ग्रामवास में नराकृति विचार -नामाक्षरानुसार ग्रामवास विचार- ग्राम के सम्बन्ध में शिवा बलि विचार -राश्यानुसार ग्रामवास में निशिद्ध स्थान आदि अनेक विधियां बतायी गयी हैं। उसमें सर्वाधिक महत्वपूर्ण व प्रचलित विधि है - काकिणी विचार। आइए इस कांकिणी विचार को समझें –

3.3.1 काकिणी विचार

काकिणी विचार को स्पर्श करने से पूर्व यह समझना भी आवश्यक प्रतीत हो रहा है कि जातक के जन्म नक्षत्र एवं उसके चरण के भेद से जातक का नाम रखा जाता है परन्तुं प्रायशः यह भी देखने को मिला है कि जातकों का नाम जन्म नक्षत्रचरणानुसार तथा प्रसिद्ध नाम भिन्न भिन्न होता है जिसका प्रयोग जातक पूरे जीवन भर करता है। इस आधार पर हम कह सकते हैं कि जातक की जन्म राशि व नाम राशि भिन्न हो सकते हैं।

वस्तुतः ज्योतिष शास्त्र में जातक के जन्म राशि अथवा नक्षत्र चरण के अनुसार उपलब्ध नामाक्षर का ही विशेष रूप से प्रतिपादन मिलता है, जिसका प्रयोग विभिन्न संस्कारादि मुहूर्तो के निर्धारण मे तथा अन्य शुभ फलादेश कथनों में किया जाता है तथापि काकिणी विचार करते समय जन्म की अपेक्षा नाम राशि का ही विचार करने का विधान है। जैसा कि कहा भी गया है कि -

काकिण्या वर्गशुद्धौ च द्यूते वादे स्वरोदये ।
मन्त्रे पुनर्भूवरणे नामराशेः प्रधानता ।।[5]

उपर्युक्त श्लोक में स्पष्ट है कि काकिणी वर्गशुद्धि-द्यूत क्रीडा वाद - विवाद - स्वरोदय- मन्त्र दीक्षा ग्रहण करने में तथा पुनर्विवाह करने में जन्मराशि की अपेक्षा नाम राशि की प्रधानता होती है। हमें साथ ही यह भी समझना चाहिए कि काकिणी से पहले वर्गो का ज्ञान होना भी महत्वपूर्ण है क्योंकि किस नामाक्षर वाले व्यक्ति को किस दिशा अथवा किस ग्राम - नगर आदि में अपना निवास बनाना चाहिए अर्थात् जातक को अपने नाम के आद्याक्षर के अनुसार किस आद्याक्षर नाम ग्राम नगर मौहल्ला शुभ अथवा अशुभ रहेगा । इसका विचार काकिणी द्वारा किया जा सकता है । अतः यहां सर्वप्रथम वर्ग-उनके स्वामी- एवं दिशाओं का परिचय कराना भी इस लेख में आवश्यक प्रतीत हो रहा है । यथा- इस सम्बन्ध में प्रमाण स्वरूप नारदादि ऋषियों ने कहा भी है कि-

अकारादिशु वर्गेषु दिक्षु पूर्वादितः क्रमात् ।
गृध्रमार्जार सिंह-श्वसर्पाखुमृग शशकाः।।
दिग्वर्गाणमियं योनिः स्ववर्गात्पंचमो रिपुः।
रिपुवर्गं परित्यज्य शेषवर्गः शुभप्रदाः ।।[6]

---

4. बृहद्वास्तुमाला 1.93 (वासयोग्यभूमि लक्षण)
5. वास्तुरत्नावली 1.6
6. वास्तुसार, पृष्ठ 09

इस प्रकार निम्नलिखित सारणी में उपर्युक्त श्लोक की व्याख्या दर्शायी गयी है जिसमें पूर्वादि क्रम से अ,क,च,ट,त,प,य,श आदि आठ वर्ग तथा उनके स्वामी तथा दिशा आदि निर्दिष्ट हैं। अपने वर्ग से पंचम वर्ग वाले स्वामी परस्पर शत्रु होते हैं, क्योंकि ये परस्पर विपरीत रहते हैं अर्थात् पूर्व के स्वामी गरुड़ का अपने से पंचम (पश्चिम) के स्वामी सर्प के साथ वैर रहेगा। अतः इस विश्लेषण से हमें यह समझना होगा कि शत्रु दिशा के देश अथवा स्थान में गृह नहीं बनाना चाहिए यहां निवास शास्त्र सम्मत नहीं रहेगा। सारणी द्वारा भी हम यहां यह स्पष्ट करते हैं

क्रम	वर्ग	आद्य नामाक्षर	दिशा	स्वामी	शत्रुयोनि	शत्रुदिशा
01.	अ वर्ग	अ, इ, उ, ऋ, लृ, ए, ऐ, ओ ,औ	पूर्व	गरुड़	सर्प	पश्चिम
02.	क वर्ग	क, ख, ग, घ, ङ	आग्नेय	मार्जार	मूषक	वायव्य
03.	च वर्ग	च, छ, ज, ड,ञ	दक्षिण	सिंह	गज	उत्तर
04.	ट वर्ग	ट, ठ, ड, ढ, ण	नैऋत्य	श्वान	शशक	ईशान
05.	त वर्ग	त, थ, द, ध, न	पश्चिम	सर्प	गरुड़	पूर्व
06.	प वर्ग	प, फ, ब, भ, म	वायव्य	मूषक	मार्जार	आग्नेय
07.	य वर्ग	य, र, ल, व	उत्तर	गज	सिंह	दक्षिण
08.	श वर्ग	श, श, स, ह	ईशान	शशक	श्वान	नैऋत्य

उपर्युक्त चक्र को समझने के पश्चात् हम काकिणी को समझने का प्रयास करते है - जैसा कि अब तक हमें विदित हो गया है कि काकिणी के सम्पादन में उपर्युक्त अष्टवर्ग का महत्वपूर्ण स्थान है अतः हम कह सकते हैं कि इन्ही आठ वर्गो की शुभ अथवा अशुभ गणना करने को ही वर्ग काकिणी कहा जाता है। शब्दकल्पद्रुम के अनुसार काकिणी का शाब्दिक अर्थ - ककलौल्ये धातु से ककते - गणना काले चंचली भवतीति। कक + णिनि + ङीप् ।[7] यहां पर वर्गो की शुभाशुभ गणना करने में वर्ग काकिणी शब्द का प्रयोग किया गया लगता है। वास्तुप्रबन्ध ग्रन्थ के अनुसार **"कर्तुनामाक्षरेणैव ऋक्षज्ञानं चकारयेत्"**के अनुसार गृहस्वामी के नाम के आद्य अक्षर (वर्ग) के आधार पर नाम - नक्षत्र राशि आदि का निर्णय किया जाता है। परन्तु यहां यह भी ध्यान में रखा जाना चाहिए कि वास्तुशास्त्रीय अबकहड़ा चक्र ज्योतिष शास्त्रीय अबकहड़ाचक्र से भिन्न है। अतः देश चयन के सन्दर्भ में वास्तुशास्त्रीय अबकहड़ा चक्र को ही उपयोग में लाना चाहिए। जो कि इस प्रकार है -

अश्विन्यादित्रयं मेषे सिंहे प्रोक्तं मघात्रयम्।
मूलादित्रितयं चापे शेषभेषु द्वयं द्वयम् ।।[8]

अर्थात् भसन्धि (गण्डान्त) की मेष, सिंह तथा धनु राशियों के अन्तर्गत तीन तीन नक्षत्रों की राशियां (वास्तु में) परिकल्पित है तथा शेष राशियों में दो-दो नक्षत्र ग्रहण किये गये हैं। इसी प्रकार से गृहस्वामी के नामाद्याक्षर के अनुसार नक्षत्र एवं राशि ग्रहण करना अभीष्ट माना गया है। अब हम काकिणी साधन को समझते हैं कि काकिणी साधन कैसे किया जाता है - इस सन्दर्भ में शास्त्र प्रमाण मिलता है कि -

---

[7]. शब्दकल्पद्रुम मोबा. एण्ड्रोयड एप

[8]. मु.चि.पी.टी

स्ववर्गं द्विगुणं कृत्वा परवर्गेण योजयेत् ।
अष्टाभिश्च हरेद् भागं योऽधिकः स ऋणी भवेत् ।।[9]

प्रामाण्यस्वरूप प्रस्तुत श्लोक का भावार्थ स्पष्ट है कि जो गृहस्वामी है उसके नाम के आद्यक्षर के अनुसार जो वर्ग है उसकी संख्या को दो गुना करके दूसरे (ग्रामादि) के नाम के प्रथमाक्षरानुसार प्राप्त वर्ग की संख्या को जोड़े फिर प्राप्त योग में आठ से भाग दें फिर प्राप्त शेष संख्या गृहस्वामी की काकिणी होगी। इसी प्रकार ग्रामादि के नाम के आद्यक्षरनुसार वर्ग की संख्या को दो गुना कर दूसरे (गृहस्वामी) के नामाक्षरानुसार वर्ग की संख्या को जोड कर आठ से भाग देने पर प्राप्त शेष संख्या ग्राम की काकिणी होगी अब इसमें जिसकी कांकिणी अधिक होगी वह ऋणी होगा अर्थात दूसरे के लिए लाभकारी होगा।

उपर्युक्त श्लोक में **योऽधिकः स ऋणी भवेत्** का कुछ लोग अर्थ करते है कि जिसकी काकिणी अधिक होगी वह ऋणी होगा। फिर भी कुछ विद्वान लोग इसका विपरीत अर्थ करते हैं यथा -

स्ववर्गं द्विगुणं विधाय परवर्गाढ्यं गजैः शेषितम् ।
काकिण्यस्त्वनयोश्च तद्विवरतो यस्याधिकाः सोऽर्थदः ।।[10]

यहां पर भी काकिणी पूर्व की भांति ही निकालने का विधान है परन्तु अन्तिम पद **"यस्याधिकाः सोऽर्थदः"** के अर्थ में विद्वानों में मतान्तर है । यहां पर जिसकी काकिणी अधिक है वह पक्ष अर्थद अर्थात् धन देने वाला जिसका तात्पर्य है घाटे में जाने वाला तथा कम काकिणी वाला पक्ष लाभ में रहता है। किन्तु यह पक्ष बहुसम्मत नहीं है।

अब हम उदाहरण से काकिणी साधन कैसे करते है यह समझते हैं - जैसे कोई विक्रम नामक व्यक्ति है उसको मसूरी में निवास करना है तो इसके लिए यह कैसा रहेगा ? आइए जानते हैं -

व्यक्ति का नाम- विक्रम, नगर का नाम- मसूरी। अब हम नियमानुसार व्यक्ति के आद्यनामाक्षरानुसार वर्ग का विचार करते है तो वह वर्ग हुआ यवर्ग अर्थात् इसकी संख्या 7 है तथा नगर के आद्यनामाक्षर के अनुसार वर्ग संख्या प वर्ग अर्थात् 6 वर्ग संख्या आयी। इसके अनुसार अब नियमानुसार वर्ग संख्या के आधार पर काकिणी विचार करते है- यथा- **स्ववर्गं द्विगुणं कृत्वा परवर्गेण योजयेत्** इसका तात्पर्य है कि अपने वर्ग को सबसे पहले दो गुणा करें और दूसरे वर्गांक को जोड़े अर्थात् व्यक्ति का वर्गांक 7 है तथा नगर का वर्गांक 6 है। इस प्रकार से 7 को दोगुना किया तो 14 हुआ अब इसमें 6 जोड़े तो 20 आया अब इसमें नियमानुसार 8 से भाग देने पर जैसे कि नियम कहता है । **("अष्टाभिश्च हरेद् भागं येऽधिकः सऋणी भवेत्")** के अनुसार आठ से भाग देने पर 20 भाग 8 तो 4 शेष आये तो हम कह सकते है कि विक्रम की काकिणी- 4 है। इसी प्रकार मसूरी की काकिणी देखते हैं- मसूरी का वर्गांक है- 6 है, से दो गुणा किया तो 12 आया अब इसमें दूसरे के वर्गांक को जोडा तो 19 आया इसमें 8 से भाग दिया तो शेष 3 शेष आया। इसमें मसूरी की काकिणी 3 आयी तथा विक्रम की काकिणी 4 थी। इस प्रकार नियमानुसार **"योऽधिकः स ऋणी भवेत्"** के अनुसार मसूरी की काकिणी (3) से विक्रम की काकिणी (4) अधिक हे अतः हम कह सकते हैं कि विक्रम के लिए मसूरी में

---

9. बृ.वास्तुमाला 1.18
10. मु.चि.वा.प्रकरणम्

रहना लाभकरक नहीं रहेगा। इसी प्रकार अन्यों की भी समझनी चाहिए। **योऽधिकः स ऋणी भवेत्** के अनुसार विक्रम ऋणी रहेगा इसी प्रकार मित्रों और सेव्य सेवकों में भी वर्ग काकिणी देखनी चाहिए।

3.3.2 ग्रामवास में नराकृति विचार

किसी व्यक्ति के लिए गांव या नगर में बसना लाभप्रद है या नहीं ? यही जानने के लिए शास्त्रकारों ने नराकृति चक्र का सिद्धान्त प्रस्तुत किया जिसमें नक्षत्रों के न्यास की व्यवस्था की है। इस नराकार चक्र में पांच नक्षत्र मस्तक में न्यास करें जिनमें यदि अपना जन्म नक्षत्र हो तो लाभप्रद समझें। तीन नक्षत्र मुख में होंगें जिनमें जातक का जन्म नक्षत्र हो तो धन की हानि, कोख में पांच नक्षत्र होंगे जिनमें यदि जन्म नक्षत्र हो तो धन- धान्य की प्राप्ति होती है। और अग्रिम छः नक्षत्र होंगे जिनमें यदि जातक का जन्म नक्षत्र हो तो स्त्री हावी होती है। पीठ पर एक नक्षत्र होगा जो यदि जन्म नक्षत्र हो तो पैर में पीड़ा, नाभि स्थल पर चार नक्षत्रों में यदि जन्म नक्षत्र हो तो धन सम्पदा गुह्यांग पर एक नक्षत्र होगा तथा वह जन्म नक्षत्र ही हुआ जो डर एवं पीड़ा देने वाला होता है इसी प्रकार दायें व बायें हाथ में एक- एक नक्षत्र होगा जो यदि जन्म नक्षत्र है तो क्रमशः रुदन क्रन्दन और भेदकारी होगा। इस चक्र में ग्राम का जो नक्षत्र हो उससे अपने जन्म नक्षत्र तक गणना कर फल का विचार किया जाना चाहिए। इसलिए ग्रामवास के सन्दर्भ में हमारे शास्त्रकारों ने नराकृतिचक्र के रूप में निम्न श्लोक प्रस्तुत किए हैं -

मस्तके पंच लाभाय मुखे त्रीणी धनक्षयः ।
कुक्षौ पंच धनं धान्यं षट् पादे स्त्रीदरिद्रता।।

पृष्टे चैकं पादहानिर्नाभौ चत्वारि सम्पदः ।
गुह्ये चैकं भयं पीड़ा हस्ते चैकं तु क्रन्दनम्।

वामे चैकं करे भेदो ग्रामचक्रे नराक्रतिः।
गणयेज्जन्मनक्षत्रं ग्रामनक्षत्रतः सदा ।।

नराकृतिस्फुटार्थं चक्रम्

क्रम संख्या	**ग्राम नक्षत्र से जन्मनक्षत्र तक गिनने पर संख्या**	**अंग स्थान**	**फल**
01.	5	सिर	लाभ
02.	3	मुख	धन क्षय
03.	5	कुक्षि	धन-धान्य
04.	6	पैर	स्त्री दरिद्रता
05.	1	पीठ	पाद हानि
06.	4	नाभि	सम्पदा

07.	1	गुदा	भय, पीड़ा
08.	1	दायां कर	क्रन्दन
09.	1	वाम कर	भेदकारी

3.3.3 नामराशि से ग्रामवास का शुभाशुभत्व

वस्तुतः इस इकाई में जहां भी ग्रामवास अथवा क्षेत्र एवं स्थान का विचार है वहां हम देश से ही भाव ग्रहण करें। यहां नामराशि से ग्रामवास विचार का तात्पर्य देश चयन से ही है। अतः विभिन्न शास्त्रकारों के मत से जातक की नामराशि से देशचयन का विचार भी किया गया है। यथा-

नामक्षद्विसुताङ्कदिग्भवगतो ग्रामः शुभोऽन्योऽन्यथा।
तत्कोणेऽन्त्यभुवां शुभं निवसतां दोषः परेशामलम्।।

कन्याकर्किधुनुस्तुला क्रियघटाः कौर्प्यण्डजौ याम्यतो।
मध्येऽन्ये न्यवसन्त्यथेन्द्र ककुभो वर्गाः स्युरोजस्विनः ।।(वा.सा. 1.18)

उपर्युक्त प्रमाण में नामराशि से देश चयन का भाव यह है कि जातक की नाम की राशि से ग्राम अथवा नगर की राशि अगर 2/5/9/10/11 वीं हो तो उस जातक के लिए उस गांव अथवा नगर में वास करना शुभ रहेगा अन्यथा अशुभ है। इसके अनन्तर उस गांव अथवा नगर के कोणों में अन्त्यजों का निवास शुभ है अन्य वर्णो का निवास अशुभ है। इसी प्रकार गांव के दक्षिण भाग में कन्या राशि वाले तथा नैऋत्य में कर्क रोश के जातक तथा पश्चिम में धनु राशि के जातकों को निवास करना चाहिए। इसी प्रकार वायव्य में तुला, उत्तर में मेष, ईशान में कुम्भ, पूर्व में वृश्चिक, आग्नेय में मीन तथा शेष राशियां अर्थात् वृष मिथुन, सिंह तथा मकर राशि के जातक ग्राम के मध्य में निवास करें तो कल्याणकारी रहेगा। पूर्वादि दिशाओं से अवर्गादि आठ वर्ग क्रमशः बली होते है।

इसी प्रकार इसी सन्दर्भ में एक मतान्तर भी मिलता है कि ग्राम व नगर की राशि 1/7 होने पर वैर, 3/6 होने पर हानि, 4/8/12 वें होने पर रोग तथा शेष स्थान में होने पर जातक को सुख प्राप्त होता है। यथा-

एकभे सप्तमे ग्रामे वैरं हानिस्त्रिषष्ठगे।
तुरयाष्टद्वादश रोगः शेषस्थाने सुखं भवेत् ।। (वास्तुसार 1.19)

इसी प्रकार एक अन्यमत के अनुसार व्यक्ति के व्यावहारिक नाम से उपर्युक्त प्रकार से ही 2,5,9,10,11 वीं ग्राम की राशि हो तो उस ग्राम में व्यक्ति निवास करे तो उत्तम होता है।

इसी प्रकार 4,8,12 वीं राशी ग्राम की हो तो रोग 1,7वीं राशि ग्राम की हो तो वैरित्व एवं 3,6 वीं राशि ग्राम की हो तो हानि होती है। इसी सन्दर्भ में कहा भी है -

स्वनामराशितो ग्रामराशिर्द्व्यङकेषु दिक्शिवैः।
सम्मितश्चेत्तदा तस्य तद्ग्रामं वास उत्तमः।।

रोगोऽष्टद्वादशे तुर्ये वैरमाद्ये च सप्तमे।
हानिः षष्टे तृतीये च ग्रामराशौ स्वनामभात् ।। (वा.सा. 1.28)

यही भाव अन्य शब्दों में भी कहा गया है कि -

यदग्रामभं द्वयङ्कसुतेश काष्ठामितं भवेल्लाभमतः शुभः सः।
यद् भं शशाङ्काग्निः न गाब्धितुल्यं मध्योष्टषटकार्कमितं निशिद्धः ।। (वास्तुसार 1.29)

अर्थात् निवास करने वाले जातक की नामराशि से 2,5,9,10,11 वीं अगर उस ग्राम अथवा नगर की राशि है तो वहां निवास करना उत्तम माना जाएगा। इसी प्रकार 1,3,4,7 वीं राशि हो तो सम तथा 6,8,12 वीं राशि हो तो वहां निवास निशिद्ध माना जाता है।

3.3.4 नामाक्षर के अनुसार ग्रामवास विचार

नामाक्षरानुसार भी ग्रामवास का विचार भी हमारे शास्त्रकारों ने बहुत वर्ष पहले ही समाज को दे दिया था जो कि निम्न है - जैसा कि प्रमाणरूप में **वास्तुसार ग्रन्थ में श्लोक संख्या 1.20-21** पर प्रमाणित है, यथा -

ग्रामानामाक्षरं ग्राहयं चतुर्भिर्गुणयेत्ततः ।
नरनामाक्षरं योज्यं सप्तभिर्भागमाहरेत् ।।

पुत्रलाभो धनप्राप्तिः व्ययः आयुः क्रमेण च ।
शत्रुनाशं राज्यलाभं निशेषे मरणं ध्रुवम् ।।

अर्थात् ग्राम नामाक्षर संख्या को उपर्युक्त सिद्धान्तानुसार 4 से गुणा करके जातक के नामाक्षर संख्या को जोड़ के 7 से भाग देना है फिर यदि 1 शेष बचे तो पुत्रलाभ 2 शेष बचे जो धन प्राप्ति, 3 शेष बचे तो व्यय, 4 शेष बचे तो आयु, 5 शेष बचे तो शत्रुक्षय, 6 शेष बचे तो राज्यलाभ और 7 शेष बचे तो मरण होता है।

उदाहरण से समझते हैं- जैसे रामपुर में रामनाथ प्रसाद को निवास करना है तो उपर्युक्त सिद्धान्त के अनुसार ग्रामाक्षर संख्या 4 से गुणा करके जातक के नामाक्षर संख्या 7 जोड़कर 4x4 = 16+7 = 23 को सात से भाग दिया तो 2 शेष बचा इसलिए उक्त ग्राम में निवास करने से रामनाथ प्रसाद को धनप्राप्ति होती रहेगी।

3.3.5 ग्रामवास के सम्बन्ध में शिवाबलि का विचार

ग्राम वास अथवा देश चयन के सन्दर्भ में शिवाबली अर्थात् श्रृगालिन को बलि दी जाती है जिसके बारे में बताया गया है कि किसी निर्जन देश में निशीथ के समय मांसादि से युक्त भात को भूमि पर रखकर कुछ दूर जाकर देखना चाहिए कि यह शिवा किस दिशा में रुदन करती है तदनुसार फल इस प्रकार देखना चाहिए कि यदि वह शिवा (श्रृगालिन) नैऋत्य कोण में शब्द करे तो वहां निवास निषिद्ध माना गया है। इसी प्रकार दक्षिण दिशा में शिवा बोले तो कल्याणकारी, आग्नेय कोण में बहुत भयप्रद, पूर्व दिशा में शिवा बोले तो उच्चाटन या वैरभाव वर्धक समझें, इसी प्रकार ईशान कोण में शिवा की ध्वनि आए तो मरण या मृत्युतुल्य कष्ट मिलता है। उत्तर दिशा में शब्द सुनाई पड़े तो शुभ रहता है, वायव्य कोण में भयप्रद और पश्चिम दिशा में शिवा बोलती है तो अथवा पश्चिम में दिशा में श्रृगालिन बोलती सुनाई पड़े तो सुख प्राप्त

होता है एसा जानना चाहिए। इसके अतिरिक्त चारों ही दिशाओं में श्रृगालिन बोलते सुनाई पड़े तो उस स्थान पर निवास का विचार त्याग देना चाहिए यही श्रेयस्कर रहेगा। इसी प्रकार यदि चुप रहे अथवा कोई आवाज सुनाई न पड़े तो सर्व लाभ होगा ऐसा गर्गादि आचार्यो का मत है।[11]

स्पष्टार्थ चक्र-

क्र.संख्या	**01**	**02**	**03**	**04**	**05**	**06**	**07**	**08**
दिशा	पूर्व	आग्नेय	दक्षिण	नैऋत्य	पश्चिम	वायव्य	उत्तर	ईशान
फल	उच्चाटन	महान भय	कल्याण	निषिद्ध	आनन्द	अल्पभय	मरण	त्याज्य

ग्रन्थान्तर से भी अन्य आचार्यों ने भी शिवा बलि का विचार किया है जैसे पूर्व दिशा में अगर श्रृगालिन बोले तो तस्कर भय अग्निकोण में बोले तो उपद्रव व कलहकारी, दक्षिण दिशा में बोलने पर सुख कल्याण व अर्थागम, नैऋत्य में ध्वनि आये तो अल्पकालिक या अस्थायी निवास, पश्चिम दिशा में बोलने पर धन प्राप्ति व व्यवसाय में उन्नति वायव्य कोण में बोलने पर अपने हितेशी मित्रों की प्राप्ति, उत्तर दिशा में बोलने पर दीर्घाविधि तक निवास और इशान कोण में शिवा की ध्वनि आये तो मरण अथवा मृत्यु तुल्य कष्ट होगा। ऐसा फल गृहारम्भ व गृहप्रवेश के समय विचारना अपेक्षित है।[12]

3.3.6 राशि के अनुसार ग्रामवास में निषिद्धस्थान

रामदैवज्ञादि आचार्यो ने इस विषय पर खूब लिखा है । उनके अनुसार राशी के अनुसार गांव या नगर में निवास और निरोध का बताते हुए कहते हैं कि जिस गांव में कोई बसना चाहे उस गांव के नौ हिस्से की कल्पना करें। इसमें वृष, सिंह, मकर, मिथुन, राशी वाले जातकों को उस नगर के मध्य में निवास नहीं करना चाहिए। इसी प्रकार क्रमशः पूर्वादि दिशाओं में क्रम से वृश्चिक, मीन, कन्या, कर्क, धनु, तुला, मेष, कुंभ राशि वालों को पूर्व- आग्नेयकोण-दक्षिण-नैऋत्य-पश्चिम-वायव्य-उत्तर-ईशान में निवास करना अशुभ है। अन्य शब्दों में कहें तो वृश्चिक राशि वालों को पूर्व में, मीन राशि वालों को अग्नि कोण में, कन्या राशि वालों को दक्षिण में, कर्क राशि वालों को नैऋत्य कोण में, धनुराशि वालों को पश्चिम में, तुला राशि वालों को वायव्य कोण में, इसी प्रकार मेष राशि वालों को उत्तर में और कुंभ राशि वाले व्यक्तियों को नगर के ईशान कोण में निवास नहीं करना चाहिए अर्थात् इनके लिए ये निषिद्ध हैं। इसी प्रकार आकारादि वर्ग पूर्वादि दिशाओं में बलशाली माने जाते हैं और अपने से पाँचवाँ वर्ग शत्रुभाव

[11] नैर्ऋत्यां हि शिवा रौति तदा वासं न कारयेत्। दक्षिणे रौति कल्याणं वह्निकोणे भयं महत्।। पूर्वे तूच्चाटनं ज्ञेयं कलिर्वा रिपुभिस्सह। ईशाने मरणं प्रोक्तमुत्तरे कुरु सर्वतः। वासं वायव्य कोणे च भयं किंचित् प्रजायते। पश्चिमे च यदा रौति तदाऽऽनन्दः प्रकीर्तितः।
अष्टदिक्षु यदा रौति तदा वासं न कारयेत्।। (निश्शब्दे सर्वलाभः स्यादिति गर्गादिभशितम्) **(वास्तुरत्नावली 1.11-13)**

[12] शुक्रे चैरादिशङ्क हुतभुजि विविध क्लेशभीतिश्च याम्ये सौख्यं कल्याणवित्तं दितिसुतदिशि चेत्स्वल्प कालस्थिश्च ।
वारुण्यां वित्तलाभोऽनिलदिशि सुहृदां सङ्गमश्चोतरस्यां वासे स्थैर्यं प्रदिष्टं शिवदिशि मरणं वास्तु वेशमप्रवेशे।।**(वा.रत्नावली 1.14)**

वाला होता है। जैसा कि ग्रन्थकारों ने कहा भी है यथा-

गोसिंहनक्रमिथुनं निवसेन्न मध्ये ग्रामस्य पूर्व ककुभोऽ लिझषाङ्गनाश्च।
कर्को धनुस्तुलमेषघटाश्च तद्वद्वर्गाः स्वपंचमपरा बलिनः स्युरैन्द्रयाः ।। (वास्तुरत्नावली 1.18)

उपर्युक्त प्रमाण को हम निम्न **राश्यानुसार ग्रामवास निशिद्ध स्थान चक्र** से भी समझ सकते हैं -

ग्राम की दिशा	मध्य	पूर्व	आग्नेय	दक्षिण	नैऋत्य	पश्चिम	वायव्य	उत्तर	ईशान
निषिद्ध राशि	2,5,10, 3	8	12	6	4	9	7	1	11
वर्ग	—----	अ	क	च	ट	त	प	य	श

इसी सन्दर्भ में भूपाल वल्लभ नामक ग्रन्थ में मतान्तर से लिखा है जिसका उद्धरण वास्तुरत्नावली ग्रन्थ में भी दिया है जिसका भाव भी लगभग इसी प्रकार का है। यथा -

वर्गाः खगेशमार्जारसिंहश्वसर्पमूषकाः।
इभावी पूर्वतस्तेषां स्ववर्गात्पंचमो रिपुः।।
तस्मात् स्ववैरिवर्गस्य दिशि वासो न शोभनः।। वास्तुरत्नावली (1.19)

अर्थात्- पूर्वोक्त आठों वर्गों के स्वामी क्रमशः गरुड़, बिलाव,सिंह, श्वान, सर्प, मूषक, गज और मेष माने गए हैं। ये ही पूर्वादि दिशाओं के स्वामी भी कहे गए हैं। अपने -अपने वर्ग से प्रत्येक पांचवें स्थान का स्वामी परस्पर शत्रुभाव लिए रहता है। इस प्रकार श्त्रुभाव की दिशा में व्यक्ति को निवास नहीं करना चाहिए।

नाम के अक्षर के अनुसार

क्रम सं.	01.	02.	03.	04.	05.	06.	07.	08.
नामाक्षर	अ वर्ग	क वर्ग	च वर्ग	ट वर्ग	त वर्ग	प वर्ग	य वर्ग	श वर्ग
वर्ग	गरुड़	बिड़ाल	सिंह	श्वान	सर्प	मूषक	मृग/गज	मेष/शशक
शत्रु	त	प	य	श	अ	क	च	ट
गरुड़ादि वर्ग की दिशा	पूर्व	आग्नेय	दक्षिण	नैऋत्य	पश्चिम	वायव्य	उत्तर	ईशान
शत्रु वर्ग दिशा	पश्चिन	वायव्य	उत्तर	ईशान	पूर्व	आग्नेय	दक्षिण	नैऋत्य

3.4 देश का विचार - (देश का चयन)

जैसे कि पहले ही प्रस्तुत इकाई में यह स्पष्ट किया जा चुका है कि देश- स्थान - क्षेत्र ये सब समानार्थक शब्द हैं। वस्तुतः देश अथवा स्थान के निर्धारण हेतु आक्षांश एवं दशान्तर का साधन किया जाता है। अब अक्षांश और देशान्तर क्या हैं ये समझने के लिनए पृथ्वी के गोलत्व को समझना पड़ेगा। जैसा कि सभी जानते हैं कि हमारी पृथ्वी गोल है। इस प्रकार गोल पृथ्वी को दो आधे आधे भागों में बांटा जा सकता है। यहां हम पहले प्रकार से गोल को पृथ्वी के दोनों उपरीभाग अर्थात् पृष्ठीय ध्रुवों से 90 अंश की दूरी पर स्थित भूमध्यवृत्त से दो भागों में विभाजक किया जाता है। इन दोनों भागों को हम उत्तरी गोलार्ध जो कि उपर की तरफ व दक्षिण गोलार्ध (नीचे की तरफ) कहते हैं। इन दोनों गोलार्धो को बीच से विभाजित करने वाली रेखा को ही भू मध्य रेखा अथवा विषुवत रेखा अथवा निरक्षवृत्त अर्थात् शून्य अक्षांश रेखा भी कहा जाता है।

इसको अगर हम दूसरे शब्दों में समझें तो इसी भूमध्य से उत्तरी ध्रुव तक के नब्बे अंश के क्षेत्र को उत्तरी गोलार्ध तथा इसी प्रकार दक्षिणी ध्रुव तक के 90 अंशों तक के विस्तार को दक्षिणी गोलार्ध के नाम से जाना जाता है। हम अपने स्थान का निर्धारण भी इसी विषुवद्वृत्त के आधार पर अक्षाशों द्वारा करते हैं।

द्वितीय प्रकार से हम अपने देश का निर्धारण देशान्तरों के माध्यम से करते है की कल्पना की है। इसके अन्तर्गत इनमें से एक वृत्त को मानक भूमध्य देशान्तर मानकर उससे पूर्व या पश्चिम कितने अंशादि पर अपना स्थान अथवा देश है इसका ज्ञान किया जाता है। किसी स्थान की सटीक स्थिति को उस स्थान के अक्षांश व देशान्तर की मदद से जान सकते है। किसी स्थान को अक्षांशधरातल पर उस स्थान की उत्तर-दक्षिण स्थिति को बताता है। जबकि देशान्तर उसी स्थान की पूर्व-पश्चिम स्थिति को बताता है। प्रस्तुत इकाई में हम अब अक्षांश व देशान्तर को विस्तार से समझने का प्रयास करते हैं।

3.4.1 अक्षांश विचार

चित्र 1 में दर्शाये अनुसार पूर्व से पश्चिम की तरफ पृथ्वी को घेरते हुए पूरी गोलाई में यदि पृथ्वी के उत्तरी एवं दक्षिणी ध्रुवों वाले भागों में समान दूरी पर रेखायें खीचीं जाये तो इनको अक्षांश कहा जाता है। इन अक्षांशों की सहायता से किसी व्यक्ति का स्थान भूमध्य रेखा अथवा विषुवत रेखा से कितनी दूरी पर है ? यह जान सकते हैं। इसी के अनुसार लग्न आदि समस्त गणनायें की जाती है तथा पंचाग आदि बनाये जाते हैं। समान्यतया हम ये समझते हैं कि भूमध्यरेखा 0°अक्षांश रखा गया है तथा हम इसे ही निरक्षदेश कहते हैं। भूमध्य रेखा के समीप स्थित सभी स्थानों का राशि उदयमान बराबर रहता है। हम इस विषुवत रेखा से जैसे उत्तर अथवा दक्षिण दिशा की तरफ जाते है वैसे-वैसे उन स्थानों के राशि उदयमान में परिवर्तन आता जाता है। यह विस्तार से समझते है जैसे 1° अक्षांश की दूरी में पृथ्वी पर लगभग 111 कि.मी. का विस्तार आता है। इस प्रकार 1 कला में लगभग 1850 मीटर और 1 विकला में लगभग 31 मीटर की दूरी आती है। भूमि की समस्त आबादी लगभग 66° उत्तर व दक्षिण अक्षांश के बीच स्थित है। हमारे प्राचीन ग्रन्थों में पलभा से अक्षांश साधन करने की विधि भी बतायी गयी है। अक्षांश रेखाएँ भूमध्य रेखा (पूर्व-पश्चिम) के समान्तर होती है तथा उत्तर और दक्षिण दोनों और समान दूरी पर होती हैं। जैसे कि हमने जाना भूमध्य रेखा पर अक्षांश शून्य होते हैं।

चित्र 1

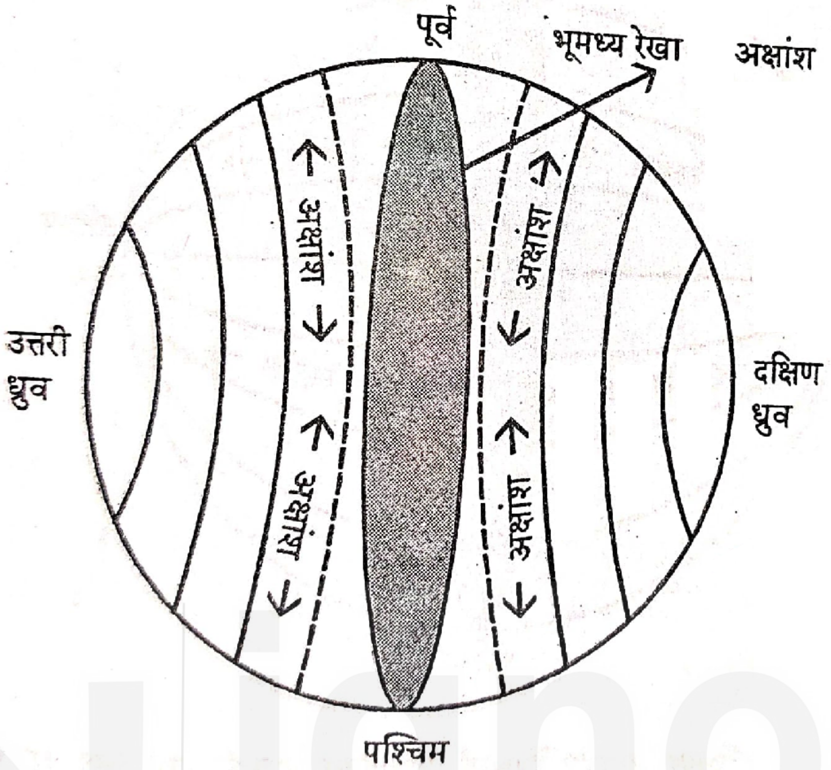

अतः भूमध्य रेखा पर पड़ने वाले किसी भी स्थान पर कोई व्यक्ति यदि रात्रि में दोनों ध्रुवों का दर्शन करे तो उत्तरी व दक्षिणी दोनों ध्रुव क्षितिज से सटे हुए दिखाई देंगे यहां यह भी ध्यान देना आवश्यक है कि निरक्ष से भिन्न किसी भी सात स्थान पर दोनों ध्रुवों के एक साक्ष दर्शन कभी भी नहीं होगे। अक्षांश के सन्दर्भ में अगर हम समझें तो ध्रुवतारा क्षितिज से जितने अंश उपर उठा रहता है उतने अंश ही उस स्थान का अक्षांश होता है। दूसरा ध्रुव अक्षांश तुल्य अंश पर क्षितिज के नीचे चला जाता है इसलिए अदृश्य हो जाता है। इसलिए ज्योतिष शास्त्र के सिद्धान्तीय ग्रन्थों के अनुसार ध्रुव की उन्नति (क्षितिज से उठाव) तुल्य ही अक्षांश की परिभाषा बतायी गयी है। यथा-

ध्रुवताराया उन्नतिस्तावन्तोऽक्षांशाः ।।

अभीष्ट स्थान का कितना अक्षांश होगा ? इसका प्रत्यक्षज्ञान हम एक अन्य सरल रीति से करने का प्रयास करते है यथा रात्रिकाल में किसी पाइप के छिद्र से अगर हम ध्रुव दर्शन का प्रयास करें तो उस छिद्र द्वारा ध्रुव दर्शन होते ही उस नालिका को अपने सरलमार्ग में नीचे की ओर बढ़ाकर भूमि से सटा दिया जाये तो इस प्रकार एक त्रिभुज का निर्माण होगा। इस त्रिभुज में नलिका भूमि पर जहां लगी है उस कोण के बराबर ही उस स्थान का अक्षांश होगा।

3.4.2 देशान्तर विचार

देशान्तर का अर्थ होता है दो रेखा देशों का अन्तर। देश का अर्थ यहां स्थान है न कि राजनैतिक मानचित्र पर दर्शाया गया कोई देश। इस तरह सामान्य परिभाषा के तौर पर आप समझ सकते हैं कि देशान्तर का अर्थ दो स्थानों का अन्तर है। यह देशान्तर दो प्रकार का होता है- 1. पूर्व-पश्चिम, जिसे हम पूर्वापर देशान्तर कहते है तथा दूसरा दक्षिण- उत्तर जिसे याम्योत्तर देशान्तर कहते हैं। पूर्वापर देशान्तर का ज्ञान अक्षांश द्वारा किया जाता है। रेखांश या देशान्तर रेखाएँ वे

होती हैं जो रेखायें पृथ्वी पर उत्तरी ध्रुव से प्रारम्भ होकर भूमध्य रेखा को खड़ी काटती हुई दक्षिणी ध्रुव तक जाती है। जैसा कि निम्न चित्र संख्या दो में बताया गया है।

चित्र-2

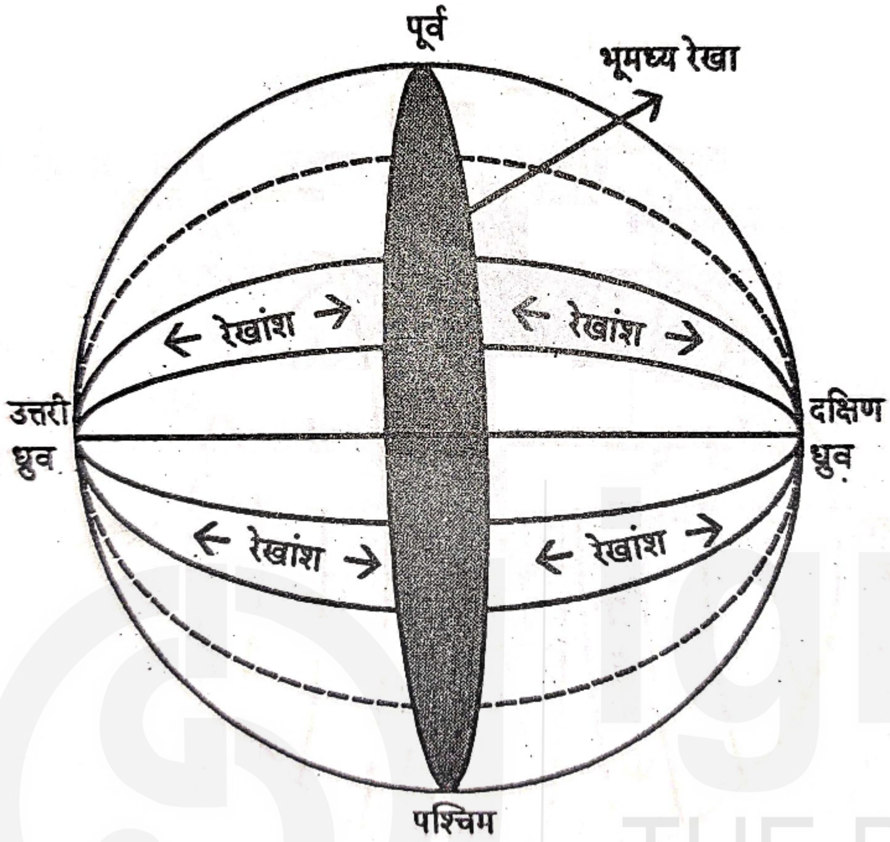

चित्र संख्या 2 में रेखायें वस्तुतः देशान्तर को दर्शाती है। ये उत्तर से दक्षिण आडी रेखाएँ है तथा पृथ्वी पर पूर्व व पश्चिम की तरफ बराबर दूरी पर गोल पर इस प्रकार दिखती है जैसे नारंगी की कलियां हों। इन रेखांश रेखाओं पर किसी एक स्थान को निश्चित करके भूमि पर दूसरे स्थानों की दूरी उस निश्चित किये हुए स्थान से नापी जाती है। अतः इनको की हम देशान्तर रेखाओं के नाम से भी जानते हैं। इग्लैण्ड स्थित ग्रीनविच नामक स्थान पर 0° देशान्तर मान लिया है अर्थात् ग्रीनविच को 0° दशान्तर मानकर निश्चित कर लिया गया है। प्राचीन काल में भारतीय ज्योतिष के अनुसार उज्जैन के देशान्तर को 0°निश्चित किया गया था। जहां से सभी स्थानों की दूरी मापी जाती थी। परन्तु अब ग्रीनविच से सभी स्थानों की दूरी मापी जाती है।

वस्तुतः भूमध्य रेखा पर इन देशान्तर के मध्य सबसे अधिक दूरी तथा दोनों ओर उत्तर-दक्षिण क्रमशः कम होती हुई दोनों ध्रुवों तक जाकर शून्य हो जाती है। यहां भी भूमध्य रेखा पर 1°अक्षाश की दूरी में पृथ्वी पर लगभग 111 (एक सौ ग्यारह) किलोमीटर होते हैं तथा 66° उत्तर व दक्षिण में अक्षांश पर यही दूरी लगभग 45 किलोमीटर तथा एक विकला में 12.5 मीटर ही रहती है। जैसा कि सभी को विदित है सूर्य पृथ्वी के 24 घंटे में एक चक्कर लगाता है। लेकिन वास्तविकता व सिद्धान्त के अनुसार पृथ्वी सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाते हुए 24 घंटे में अपनी धुरी पर एक बार पूरी घूम लेती है। जिस कारण दिन रात्रि होते हैं।अर्थात् जब पृथ्वी अपनी धुरी पर घूर्णन करती हुई एक पूरा चक्कर लगाती है तो एक वृत्त के 360° घूम लेती है और इसमें उसको 24 घंटे का समय लगता है। अर्थात् हम कह सकते हैं कि पृथ्वी एक घण्टे में

360/24 - 15° (अंश) घूम लेती है। अथवा 1 अंश = 1/15 घंटा = 60/15 मिनट = 4 मिनट। अर्थात् पृथिवी चार मिनट में एक अंश घूमती हैं । उपर्युक्त इसी सिद्धान्त के आधार पर प्रत्येक देश के स्टैण्डर्ड रेखांश में से अपने- अपने रेखांश का अन्तर भारत में 82°30 से करके 1°के 4 मिनट के मान से पूर्व में स्थित होने पर जोड़ने से और पश्चिम में स्थित होने पर घटाने से उस इष्ट स्थान का स्थानीय मध्यम समय आ जाता है। जैसे हमारे देश भारत का रेखान्तर अथवा देशान्तर 82°30‘ है तो 82°30× 4 = 330 मिनट आता जो कि 5 घण्टे 30 मिनट होते हैं। अब चूंकि भारत ग्रीनविच से पूर्व में स्थित है तो जब ग्रीनविच पर 0 समय होगा भारत में वहां से 5 घण्टे 30 मिनट समय ज्यादा होगा अर्थात् तब ग्रीनविच पर 00 बजेंगे तब भारत में 5 बजकर 30 मिनट हो रही होगी । इसी प्रकार से अन्य जगह अथवा देशों का देशान्तर के माध्यम से समय निकाल सकते हैं जिसका वहां की घड़ियाँ समय देखने के लिए में प्रयोग होता है।

3.5 सारांश

देश की अवधारणा एवं भेद नामक इस अध्याय में हमने ज्योतिषशास्त्र के प्रति आकर्षण एवं जिज्ञासा का भाव होने के कारण ही आप सभी अध्येताओं का मन इस शास्त्र के अध्ययन में प्रवृत हुए हैं। ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है। साथ ही इस इकाई अध्ययन के जितने भी उद्देश्य हमने प्रारम्भ में निश्चित किये थे वे सब हमने प्राप्त कर लिये हैं । देश की अवधारणा एवं भेद को समझाने के लिए हम जानते हैं कि समस्त पृथ्वी विविधताओं से भरी हुई है अतः उचित देश चयन के सन्दर्भ में कुछ गड़बड़ी भी हो सकती है। इसलिए समस्त भूगोल अथवा भूमि को भूमध्य रेखा से उत्तरी गोलार्द्ध व दक्षिणी गोलार्द्ध के रूप में विभाजित करते हैं यहां उत्तरी गोलार्द्ध में उत्तरी अक्षांश व दक्षिणी गोलार्द्ध में दक्षिणी अक्षांश होते हैं। अक्षांशों का प्रारम्भ भूमध्येरखा से ही होता है। अथर्ववेद के उपवेद में देश का स्थान सर्वोपरि है क्योंकि देश के आधार पर ही काल का चयन होता है। अर्थात् देश का निर्धारण होने पर ही दिक् व काल का निर्धारण संभव होता है अतः देश चयन सर्वप्रथम किया जाना चाहिए जिसके लिए हमने प्रस्तुत अध्याय में विविध विधियों का ज्ञान भी प्राप्त किया है। अक्षांश व देशान्तर के विषय में विस्तृत रूप से अध्ययन किया तथा ग्रीनविच के स्थान को 0° अंश मानकर ‘देशान्तर” अथवा 1 अंश को 4 मिनट मानकर हम विश्व के सभी स्थानों का वहां के देशान्तर के आधार पर स्थानीय मानक समय का निर्धारण भी कर सकते हैं, यह जाना।

3.6 शब्दावली

तेज = अग्नि, **शोधन**= शुद्धिकरण, **अवयव** = तत्त्व, **नराकृति** = पुरुष की आकृति, **निशिद्ध** = त्याज्य, **धूतक्रीड़ा** = जुआ खेलना, **आद्याक्षर**= प्रथम अक्षर, **पूर्वादिक्रम** = पूर्व-दक्षिण-पश्चिम-उत्तर दिशाओं का क्रम, **ऋणी** = उधार लेने वाला, **अर्थद** = धन देने वाला, **महाजन** = सेठ आदि (जो लोगों के ऋण आदि देते हैं), **ग्रामवास** = गांव में निवास, **सम्पदा** = सम्पति, **कोण दिशा** = ईशानादि कोणीय दिशा, **शिवा** = श्रृगालिन, **निशीथ** = अर्धरात्रि, **भूमध्य** = भूमि के मध्य का स्थान, **निरक्ष** = शून्य अक्षांश, **गोल** = ग्लोब, **अक्षांश** = अपने स्थान से ध्रुव की उंचाई, **देशान्तर** = दो रेखा देशों के मध्य का अन्तर, **दक्षिणी गोलार्ध** = भूमध्य रेखा से उत्तर दिशा का क्षेत्र, **उत्तरी गोलार्ध** = भूमध्य रेखा से उत्तर का क्षेत्र, **निरक्षदेश** = वह स्थान जहां शून्य अक्षांश हो,

3.7 सन्दर्भग्रन्थ

1. **बृहद्वास्तुमाला-**व्याख्याकार- श्रीरामनिहोर द्विवेदी, प्रकाशक - चौखम्बा सुभारती प्रकाशन-वाराणसी।
2. **वास्तुरत्नावली-** व्याखाकार- डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू', प्रकाशक - चौखम्बा ओरियन्टालिया दिल्ली।
3. **वास्तुसार -** व्याख्याता- प्रो. देवी प्रसाद त्रिपाठी जी, प्रकाशक -ईस्टर्न बुक लिंकर्स-दिल्ली
4. **बृहद् भारतीय कुण्डली विज्ञान -** सत्यदेव शर्मा, प्रकाशक - जगदीश संस्कृत पुस्तकालय- जयपुर
5. **सूर्यसिद्धान्त-** श्री कपिलेश्वर द्विवेदी, प्रकाशक - चौखम्भा संस्कृत संस्थान, वाराणसी
6. **भारतीय ज्योतिष -** नैमिचन्द शास्त्री, प्रकाशक - भारतीय ज्ञानपीठ- दिल्ली

3.8 बोध प्रश्न

1- वास्तुशास्त्रानुसार भूमि चयन के विविध सिद्धान्तों का संक्षिप्त रूप से स्पष्ट करें।

2- नाम राशि के अनुसार ग्राम वास के शुभाशुभत्व पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखें।

3- वास्तुशास्त्रीय अबकहडा चक्र क्या है ? इसे कैसे साधते हैं? विस्तार से लिखें।

4- वास्तुशास्त्र में काकिणी विचार कैसे करते हैं स्पष्ट करें।

5- वास्तुशास्त्र में भूमि चयन हेतु शिवाबलि की विधि को विस्तार से समझायें।

6- अक्षांश किसे कहते हैं ? टिप्पणी लिखें।

7- देशान्तर किसे कहते है ? स्पष्ट करें।

8- देश / स्थान की सामान्य अवधारणा को समझाएं।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY